जंगल व जमीन पर

हक की बात

एक प्रवेशिका

जंगल व जमीन पर

हक की बात (एक प्रवेशिका)

प्रकाशक

विकास संवाद
ई–7 / 226, प्रथम तल, धनवंतरी कॉम्पलेक्स के सामने
अरेरा कॉलोनी, शाहपुरा, भोपाल, मध्यप्रदेश
फोन - 0755- 4252789
ई–मेल : vikassamvad@gmail.com
वेबसाईट : www.mediaforrights.org

संस्करण : प्रथम / 2009

प्रतियाँ : 2000

लेखन एवं प्रस्तुति : सचिन जैन, प्रशांत दुबे

सहयोग : चाइल्ड राइट्स एंड यू

आवरण आकल्पन : अमित सक्सेना

मुद्रक : एम.एस.पी. ऑफसेट, भोपाल

अनुक्रमणिका

करत गया। लेकिन वन

आदिवासी एवं अन्य परंपरागत व

वन अधिकार मान्यता कानून न केवल आदिवासियों और अन्य वन निवासियों की वन भूमि और वन संसाधनों पर सामूहिक अधिकार आधारित पंहुच के रास्ते को सहज बनाता है बल्कि यह सामाजिक बदलाव में अधिकारों के लिये जनसंघर्ष की महत्ता को एक बार फिर से स्थापित भी करता है। हम सब जानते हैं कि कई बार कानून समस्याओं का हल तो देते ही हैं पर कभी-कभी नई चुनौतियों को जन्म भी देते हैं। इसी बात को ध्यान में रखते हुये हम वन अधिकार मान्यता कानून की कुछ अहम् बातों को बातचीत की शैली में प्रस्तुत कर रहे हैं। इस कानून के क्रियान्वयन के दौरान कई मर्तबा हम और हमारे साथी जमीनी कार्यशालाओं में जाते रहे हैं। वहां जो सवाल और शंकायें उठीं उन्हें भी इस प्रवेशिका में शामिल किया गया है। इसके साथ ही इस प्रवेशिका के प्रारूप को श्री ओ.पी. रावत (प्रमुख सचिव, आदिम जाति कल्याण विभाग, मध्यप्रदेश सरकार), बिजय भाई (इज्जत से जीने का अधिकार अभियान), राजेश मालवीय एवं अनिल निभोरकर (एनआईडब्ल्यूसीवायडी, नागपुर), अनिल गर्ग (सतपुड़ा लैण्ड रिसर्च एंड ट्रेनिंग सेन्टर, बैतूल) राकेश दीवान (वरिष्ठ पत्रकार), सौरभ कुमार, उमेश वशिष्ठ, विवेक पवार, शुभेन्दु, संदीप नाईक, निलेश देसाई, नीति दीवान, शंकर भाई आदि साथियों ने पढ़ा और सुझाव भी दिये।

इस प्रवेशिका में हमने मूल कानून, विभाग द्वारा समय-समय पर प्रकाशित आदेशों का संज्ञान लिया है। इसके अलावा हमने विभिन्न प्रशि[illegible] [illegible]भागी रहकर व जमीनी स्तर पर लोगों से [illegible] [illegible] देने की कोशिश की है। [illegible] [illegible] को ही देखा [illegible]

भूमिका

आजकल आदिवासियों एवं अन्य वन निवासियों को वनों पर अधिकार दिये जाने की प्रक्रिया शुरू होने के सरकारी निर्णयों से मंचों की बहस गर्म है। सरकार ने तो मान ही लिया है कि आदिवासियों–अन्य वन निवासियों के साथ ऐतिहासिक रूप से अन्याय होता रहा है। विकास की परिभाषा में कभी उन्हें तवज्जो नहीं दी गई। वे जिन प्राकृतिक संसाधनों के साथ जीवनयापन करते आये हैं, वे संसाधन भी छीनने की कोशिशें लगातार होती रही हैं। यह सच है कि वे केवल जमीन का एक टुकड़ा नहीं चाहते हैं, वे जमीन सहित संसाधनों के जिम्मेदार उपयोग और संरक्षण का पूरा अधिकार चाहते हैं। उनकी मंशा अपने निजी लालच को पूरा करने की नहीं है बल्कि वे जंगल, खनिज संसाधनों और वन्य प्राणियों को संरक्षण भी प्रदान करना चाहते हैं।

1862 में, यानी देश के पहले स्वतंत्रता आंदोलन के ठीक 5 साल बाद, अंग्रेजी हुकूमत ने वन विभाग की स्थापना की थी। तब इसकी स्थापना का उद्देश्य जंगल और बाघों की रक्षा करना कतई नहीं था। बल्कि चूंकि अंग्रेजी हुकूमत को औद्योगिकीकरण का लाभ उठाना था, जिसके लिये पानी के जहाज बनाने के लिये भारी मात्रा में लकड़ी की जरूरत थी। वे वन विभाग के जरिये प्राकृतिक संसाधनों का उपनिवेशवाद को सशक्त करने के लिए दोहन करना चाहते थे। इसके साथ ही इतिहास बताता है कि अंग्रेजों की सत्ता को सबसे पहले और सबसे सशक्त चुनौती भारत के आदिवासियों ने ही दी थी। पहले संग्राम के बाद अंग्रेज जान गये थे कि यदि भारत पर शासन करना है तो समाज के सामुदायिक चरित्र को तोड़ना होगा और चूंकि आदिवासियों का 90 फीसदी प्राकृतिक संसाधनों से करीबी संबध रहे हैं इसलिये इस संबध को समाप्त करना होगा।

वन के संबंध में अब तक जितने भी कानून बनाये गये हैं, वे ज्यादातर अंग्रेजों के बनाये गये कानून हैं, जिनका उदेश्य रहा है, वन संपदा का तरह–तरह से शोषणपूर्ण दोहन करना और उसमें रहने वाले लोगों के अधिकारों को सीमित करना। भारतीय वन अधिनियम, 1927 उसी का नमूना है। आजादी के बाद वन्य प्राणी सुरक्षा अधिनियम, 1972 एवं वन संरक्षण अधिनियम, 1980 वन क्षेत्र में लोगों के अधिकार को और सीमित करते गया। लेकिन वन क्षेत्र में पुराने समय से रहते आये हुए बहुत सारे आदिवासी एवं अन्य परंपरागत वन निवासियों के अधिकारों

(जैसे – जमीन के अधिकार, वनोपज के अधिकार, निस्तार के अधिकार, इत्यादि) का वन विभाग द्वारा बंदोबस्त एवं सेटलमेंट के जरिए समाधान न किये जाने के कारण वन में रहने वाले लोगों का कोई अधिकार नहीं रहा। इसके साथ–साथ अंग्रेजों के जमाने से एवं बाद में वन विभाग के तरफ से जंगल के उसके दमनकारी कार्यों में मदद करने के लिए लोगों को लाकर वनों में बसाया गया था। जहां उन्हें बसाया गया उसे बाद में 'वन ग्राम' के नाम से जाना गया। ये सारे गांव 1980 में वन संरक्षण अधिनियम पास होने के बाद राजस्व ग्राम नहीं हो पाये। सबसे बडी बात यह है कि पुराने जमाने से ही यानी राजाओं एवं जमीदारों के समय से वन में रहने वाले लोगों को उनके व्यक्तिगत एवं सामूहिक अधिकार थे, लेकिन आजादी के बाद एवं विभिन्न प्रदेशों के बनने के बाद सरकारों ने लोगों के अधिकारों एवं लोगों को उनके इलाके में अधिकारों का बंदोबस्त नहीं किया।

▸▸ मध्यप्रदेश के बारे में

देश की भांति मध्यप्रदेश में भी जंगल और जंगल के अधिकार का सवाल कुछ स्पष्ट नहीं है। यहां अस्पष्ट कहना इसलिये जरूरी हो जाता है क्योंकि हमेशा से जंगलों पर राज्य या सरकारी सत्ता का नियंत्रण नहीं रहा है। औद्योगिक क्रांति के दौर में ब्रिटिश हुकूमत को पहले पानी के जहाज बनाने और रेल की पटरियां बिछाने और फिर औद्योगिकीकरण के लिये लकड़ी की जरूरत पड़ी। इसी जरूरत को पूरा करने के लिये उन्होंने जंगलों में प्रवेश करना शुरू किया। जहां स्वायत्त आदिवासी और वन क्षेत्रों में निवास करने वाले ग्रामीण समुदाय से आमना–सामना हुआ। इसके बाद विकास, खासतौर पर आर्थिक विकास के लिये जब संसाधनों की जरूरत पड़ी तब यह पता चला कि मूल्यवान धातुओं, महत्वपूर्ण रसायनों, जंगली वनस्पतियों, लकड़ी और खनिज पदार्थ तो जंगलों से ही मिलेंगे और फिर राजनैतिक सत्ता पर नियंत्रण करने की पद्धति अपनाई गई।

वास्तव में अकूत प्राकृतिक संसाधनों का नियमन (Regulation) करने में कोई बुराई नहीं है किन्तु जंगलों के सम्बन्ध में जो कानून बने उनका मकसद समाज के एक खास तबके को लाभ पहुंचाना रहा है। वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार मध्यप्रदेश की जनसंख्या 6.03 करोड़ है। जिसमें से 73.33 फीसदी लोग ग्रामीण इलाकों में रहते हैं। प्रदेश की कुल जनसंख्या में से 20 फीसदी हिस्सा आदिवासी समुदायों का है जो पारम्परिक रूप से जंगलों के साथ जीवंत सम्बन्ध रखते हैं। इतना ही नहीं, ग्रामीण जनसंख्या का 18 फीसदी हिस्सा भी अपनी आजीविका और

जीवन के लिए जंगल के संसाधनों पर निर्भर है। इसका मतलब यह है कि जब हम यह कहते हैं कि जंगल के संसाधनों पर किसी विवाद का साया है तब इसका मतलब यह होता है कि हम दो करोड़ लोगों की आजीविका के संसाधनों पर विवाद की बात कर रहे होते हैं।

मध्यप्रदेश में कुल पशुधन 3.49 करोड़ की संख्या में है जिसमें गाय, भैंस, बकरी, भेड़ और बैल सबसे ज्यादा हैं। जब हम गांवों का अनुपातिक विश्लेषण करते हैं तो पता चलता है कि प्रदेश के कुल 52739 गांवों में से 22,600 गांव या तो जंगलों में बसे हुये हैं या फिर जंगलों की सीमा से सटे हुये। मध्यप्रदेश सरकार का वन विभाग सैद्धान्तिक रूप से यह विश्वास करता है कि मुख्यधारा के विकास की प्रक्रिया से दूर रहने के कारण ये समुदाय (यानी जनसंख्या का एक तिहाई हिस्सा) अपनी आजीविका के लिये जंगलों पर निर्भर है।

▸▸ मध्यप्रदेश में जंगल

मध्यप्रदेश अपनी विविधता के लिये जाना–पहचाना जाता है। विकास और सामाजिक परिवर्तन के प्रयासों के संदर्भ में भी जितने प्रयोग और परीक्षण इस प्रदेश में हुए हैं; संभवतः इसी कारण इसे विकास की प्रयोगशाला कहा जाने लगा है। मध्यप्रदेश में राजस्व और वनभूमि के संदर्भ में भी विवाद ने नित नये रूप लिये हैं। और अफसोस की बात यह है कि यह विवाद सुलझने के बजाये उलझता गया है। इस विषय को विवादित होने के कारण नजर अंदाज नहीं किया जा सकता है। जंगलों का मामला सत्ता, पूंजी और सामुदायिक सशक्तिकरण के बीच एक त्रिकोण बनाता है। इतिहास बताता है कि प्राकृतिक संसाधनों (खासतौर पर जल और जंगल) के किनारों पर ही सभ्यतायें बसती और विकास करती हैं। जंगलों और नदियों के संरक्षण से ही प्रकृति का संतुलन बनता है किन्तु विकास की जिस परिभाषा का आज के दौर में राज्य (स्टेट) पालन कर रहा है उससे सामाजिक असंतुलन के नये प्रतिमान खड़े हो रहे हैं। अतः यह महत्वपूर्ण हो जाता है कि जंगल के सवाल का जवाब खोजने के लिये व्यापक प्रयास किये जायें।

वर्ष 2001 के आंकड़ों के अनुसार (स्टेट ऑफ फारेस्ट रिपोर्ट 2001. एफएसआई) मध्यंप्रदेश में वन विभाग के नियंत्रण में 95221 वर्ग किलोमीटर का क्षेत्रफल आता है जबकि इसमें वास्तव में 77265 वर्ग किलोमीटर की जमीन पर ही जंगल दर्ज किया गया है। इसका मतलब यह है कि 18 हजार वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में जंगल नहीं है फिर भी वन विभाग का उस पर नियंत्रण है। इसमें से भी सघन वन का क्षेत्रफल

44384 वर्ग किलोमीटर ही है। वर्तमान स्थिति में मध्यप्रदेश में क्षेत्रफल की दृष्टि से सबसे ज्यादा, 76429 वर्ग किलोमीटर जंगल है। इसके बाद आंध्रप्रदेश में 68019 वर्ग किलोमीटर और छत्तीसगढ़ में 55998 वर्ग किलोमीटर जंगल है।

⏩ आश्रय के अधिकार का मुद्दा

हम यह पहले ही दर्ज कर चुके हैं कि प्रदेश के 22600 गांव या तो जंगल में बसे हुये हैं या फिर जंगल की सीमा पर। आदिवासियों के अधिकारों के संघर्ष की प्रक्रिया में सबसे अहम् मांग यही रही है कि इन्हें जंगल में रहने और अपनी आजीविका के लिये वन संसाधनों पर अधिकार मिलें। इसके लिये सबसे पहले सन् 1980 में नीतिगत निर्णय लिया गया। वास्तव में सरकार जंगल में रहने वाले आदिवासियों को अतिक्रमणकारी मानती है इसलिये सरकार ने तय किया कि 31 दिसम्बर 1976 तक जंगल में रहने वाले आदिवासियों को नियमित किया जायेगा और उन्हें ही पात्र अतिक्रमणकारी माना गया। जो आदिवासी इस तारीख के बाद से वहां रह रहे हैं उन्हें पात्र अतिक्रमणकारी नहीं माना गया और बाहर निकालने की प्रक्रिया शुरू कर दी गई।

इसके बाद व्यापक दबाव के फलस्वरूप यह देखा गया कि 70 फीसदी आदिवासी जो विवाह के बाद नये परिवार का रूप लिये हैं या एक गांव छोड़कर दूसरे गांव में गये थे, वे तो अपने अधिकार से वंचित रह जायेंगे। तब 1976 की समय सीमा को बढ़ाकर 24 अक्टूबर 1980 कर दिया गया। हालांकि यह समय सीमा आज के नजरिये से अपर्याप्त मानी जाती रही है।

⏩ वनग्रामों का मसला

मध्यप्रदेश में अभी की स्थिति में 28 जिलों में 925 वनग्राम हैं। इसमें से 98 गांव वीरान, विस्थापित और अभ्यारण्य–राष्ट्रीय उद्यानों में बसे हुये माने जाते हैं। इन 98 गांवों को छोड़कर भारत सरकार ने 827 वनग्रामों में से 310 को राजस्व गांव में परिवर्तित करने की सैद्धान्तिक स्वीकृति दे दी थी जबकि शेष 517 गांव के लिये राज्य सरकार की ओर से जनवरी–फरवरी 2004 में पुनः प्रस्ताव भेजे गये। किन्तु पर्यावरण संरक्षण के नाम पर जंगलों का औद्योगिक उपयोग के लिये शोषण करने वाले समूहों के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने 23 फरवरी 2004 को भारत सरकार की स्वीकृति पर रोक लगा दी।

अब भी इन गांवों पर कोई निर्णय नहीं हो पाया है। इन गांवों में आदिवासी समुदाय का विकास प्रभावित होता रहा है।

▸▸ मध्यप्रदेश में सामाजिक वानिकी

देश में जंगलों के सिमटते क्षेत्रफल को देखते हुये सामाजिक वानिकी को समस्या के समाधान के रूप में सामने पेश किया गया। इसे ऊपरी तौर पर तो आदर्श उद्देश्यों के साथ पेश किया गया किन्तु अनुभव बताते हैं कि समुदाय इसको लेकर असमंजस में है । 1978–83 के दौर में पांचवी पंचवर्षीय योजना के तहत यह माना गया कि जंगलों के संरक्षण के साथ–साथ गरीबी में रहने वाले समुदायों का विकास करते हुये बाजार की मांग को पूरा करना होगा। इस उद्देश्य के तहत उत्पादोन्मुखी वनीकरण, फार्म वनीकरण, सामाजिक वनीकरण की नीति अपनाते हुये जंगल में निवास करने वाले समुदायों की आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिये प्रयास करने की बात कही गई। यह तय किया गया कि वन आधारित उद्योगों की कच्चे माल की जरूरत को पूरा करने के लिये वन लगाये जायेंगे, साथ ही जल्दी बढ़ने वाले पेड़ों पर खास ध्यान दिया जायेगा। सामाजिक वानिकी के तहत बिगड़े हुये वन सुधारने, पड़ती भूमि का उपयोग करने, सड़क के किनारों पर वृक्षारोपण करने, नहर और सामुदायिक जमीन पर वन लगाने की नीति अपनाई गई। बाद में योजना के विश्लेषण से पता चला कि जंगल के विकास और ग्रामीणों की जरूरत को पूरा करने के बजाये बाजार, उद्योगों की जरूरत को पूरा करना इस योजना का प्राथमिक लक्ष्य रहा। इसके कारण अनाज का उत्पादन कम हुआ और नकद लाभ पाने के लिये नीलगिरी जैसे भारी मात्रा में पानी सोखने वाले पेड़ लगाये गये।

पहले वनों में पाई जाने वाली विविधता भी खत्म होने लगी और मोनो कल्चर के कारण भूमि की उत्पादकता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा। इतना ही नहीं इसी कारण मजदूरी के अवसर भी कम हुये।

▸▸ संयुक्त वन प्रबंधन का उपयोग

जंगल को सरकार ने हमेशा से ही केवल और केवल एक आर्थिक संसाधन के रूप में ही स्वीकार किया जिससे ज्यादा से ज्यादा लाभ कमाया जा सके। सामाजिक वानिकी के बाद संयुक्त वन प्रबंधन का दौर शुरू हुआ। संयुक्त वन प्रबंधन का मतलब यह रहा कि गांव के समुदाय के बीच से ही एक समूह का निर्माण किया जायेगा। यह समूह जंगल के संरक्षण, विस्तार और निगरानी का काम करेगा

जिसके एवज में जंगल से मिलने वाली आय में से 40 फीसदी हिस्सा उस समिति को दिया जायेगा।

वर्ष 2005 में मध्यप्रदेश में 14173 संयुक्त वन प्रबंधन समितियां 59.46 लाख हेक्टेयर जंगल पर काम कर रही थी परन्तु इसके पहले 1999 की स्थिति में मध्यप्रदेश में भारत की आधी समितियां थी और एक करोड़ हेक्टेयर में काम कर रही थीं।

मकसद पर सैद्धान्तिक रूप से तो बहस हो सकती है परन्तु व्यावहारिक रूप से संयुक्त वन प्रबंधन की अवधारणा ने समुदाय के भीतर ही टकराव का वातावरण तैयार किया। इस व्यववस्था में ग्रामवन समिति या सुरक्षा समिति का गठन किया गया। इन समितियों को जंगल पर निगरानी करने के साथ ही जंगल बचाने के लिये "अपराधियों" को दण्डित करने (आर्थिक दण्ड या दण्ड की सिफारिश करने) के अधिकार दिये गये; पर ये अपराधी उन्हीं के गांव और समुदाय के लोग होते हैं। आज की स्थिति में प्रदेश के सघन आदिवासी जिलों में जंगल में प्रवेश करने पर भी प्रतिबंध लगा दिया गया है। आमतौर पर लोग अपने उपयोग के लिये लकड़ी लाने, निस्तार–वनोपज के लिए और शौच के लिये जंगल में आते रहे हैं पर अब जंगल की सीमा (यह सीमा स्पष्ट भी नहीं होती है) में प्रवेश करते ही वन रक्षक या वन सुरक्षा समिति उस पर दण्ड लगा देती है। संकट यह है कि गांव की सीमा खत्म होते ही जंगल की सीमा शुरु हो जाती है और जानवरों की चराई, खेती जैसे काम तो गांव के बाहर ही हो सकते हैं। यह मसला वन्य प्राणी अभ्यारण्य और राष्ट्रीय पार्क के लिये बेहद महत्वपूर्ण है। इतना ही नहीं अब सरकार ने जंगलों को इंसानों से बचाने के लिये सेवानिवृत्त फौजियों को नियुक्त करना शुरू कर दिया। इन फौजियों को सरकार की ओर से हथियार और वाहनों के साथ–साथ ग्रामीण आदिवासियों को दण्डित करने का भी अधिकार दिया गया है।

▸▸ नई नीतियों के व्यावहारिक पक्ष

वर्तमान स्थिति में भारत में कुल 678333 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में जंगल माना जाता है। यह देश के कुल क्षेत्रफल का 20.63 हिस्सा है। इसमें भी सघन वन केवल 390564 वर्ग किलोमीटर यानी 11.88 प्रतिशत हिस्से में है। सरकार का नीतिगत लक्ष्य यह है कि वनों का क्षेत्रफल बढ़ाकर कुल क्षेत्रफल का 33 फीसदी किया जाये। मान्यता यह है कि आदिवासी जंगलों का विनाश करते हैं, उसे नुकसान पहुंचाते हैं। सरकार के इस मत को औद्योगिक क्षेत्र और बाघ प्रेमी बृद्धिजीवी संरक्षण प्रदान करते हैं। केन्द्र सरकार ने 1990 में आदिवासी समुदाय और राज्य के बीच वनभूमि सम्बधी विवादों के

समाधान के उन्हें नियमित करने का रास्ता स्वीकार किया किन्तु केन्द्रीय वन एवं पर्यावरण मंत्रालय ने 3 मई 2002 को एक निर्देश जारी किया कि विभिन्न राज्य एवं केन्द्रशासित प्रदेश में वन भूमि पर रह रहे सभी अवैध अतिक्रमणकारियों को 30 सितम्बर 2002 से पहले जंगल से बाहर निकाल दिया जाये।

इस परिस्थिति में भारत सरकार ने अंततः यह स्वीकार करना शुरू किया है कि आदिवासी समुदाय के वास्तविक अधिकारों की उपेक्षा की गई है। 21 जुलाई 2004 को वन एवं पर्यावरण संत्रालय ने सुविख्यात गोदावरमन बनाम भारत सरकार के मुकदमे के अर्न्तगत सर्वोच्च न्यायालय ने एक हलफ़नामा दाखिल करके स्वीकार किया कि आदिवासियों के साथ ऐतिहासिक अन्याय हुआ है क्योंकि उस समय जमीन पर मालिकाना हक के दस्तावेज नहीं थे इसलिये ब्रिटिश शासन के दौरान वन क्षेत्रों के सीमांकन के बाद भी आदिवासियों के अधिकारों का निर्धारण नहीं हो पाया।

अब यह स्पष्ट रूप से नजर आ रहा है कि आदिवासी (वन अधिकारों की मान्यता) कानून 2006 के पारित हो जाने के बाद आदिवासियों को जंगल की जमीन पर आजीविका और आवास का वैधानिक अधिकार मिल पायेगा। यह कानून 13 दिसम्बर 2005 तक जंगल क्षेत्रों में रहने वाले आदिवासियों एवं अन्य वन निवासियों के व्यक्तिगत और सामुदायिक अधिकारों को स्वीकार करता है।

कुछ खास परिभाषाएँ -

- **आरक्षित वन** - ऐसा क्षेत्र जिसे भारतीय वन कानून के अन्तर्गत पूर्ण रूप से आरक्षित वन अधिसूचित किया गया है। आरक्षित वनों के क्षेत्रफल में हर तरह की गतिविधि प्रतिबंधित होती है। वहां बिना अनुमति के कोई काम या गतिविधि नहीं की जा सकती है।
- **संरक्षित वन** - ऐसा क्षेत्र जिसे भारतीय वन कानून के प्रावधानों के अन्तर्गत सीमित स्तर तक संरक्षित अधिसूचित किया गया है। ऐसे क्षेत्र में जब तक कोई गतिविधि प्रतिबंधित नहीं की जाती है तब तक हर तरह की गतिविधि सम्पन्न की जा सकती है।
- **गैर-वर्गीकृत वन** - ऐसा क्षेत्र जिसे वन क्षेत्र के रूप में दर्ज तो किया गया है किन्तु वह न तो आरक्षित वन है न ही संरक्षित वन; उसे गैर–वर्गीकृत वन कहा जाता है।
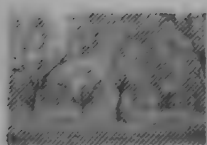
- **संयुक्त वन प्रबंधन** - वन संसाधनों के प्रबंधन के लिये वन विभाग एवं समुदाय के द्वारा संयुक्त रूप से किये जाने वाले प्रयास को संयुक्त वन प्रबंधन कहते हैं। इसमें समुदाय की सहभागिता के अनुरूप जंगल से मिलने वाले फायदे का हिस्सा मिलता है।

- **वनग्राम** - ऐसे गांव और समुदाय का समूह जो आरक्षित एवं संरक्षित जंगल में स्थानीय श्रम और श्रमिकों की आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिये निवासरत है।

- **राष्ट्रीय उद्यान** - ऐसा क्षेत्र जिस पर सरकार का हक है और जिसे प्राकृतिक व्यवस्था और राष्ट्रीय महत्व की ऐतिहासिक सम्पदा के संरक्षण के अधीन लिया गया है। मकसद यह है कि जंगली जानवरों और विविध श्रेणी के वृक्षों–पौधों को प्राकृतिक वातावरण में वर्तमान एवं भविष्य की पीढ़ियों के लिये संरक्षित किया जा सके।

- **अभ्यारण्य** - ऐसा क्षेत्र जिसमें जंगली जानवरों को पकड़ना और उनका शिकार अधिकृत प्राधिकारी द्वारा प्रतिबंधित किया गया हो।

- **नारंगी भूमि या ऑरेन्ज एरिया** - यूं तो जंगलों से सम्बन्धित किसी भी कानून में नारंगी भूमि या 'ऑरेन्ज एरिया' के बारे में कोई उल्लेख नहीं है। सन् 1959–60 में वन विभाग ने बहुत सारी जमीन, (जिनका उपयोग समुदाय करता था) को राजस्व विभाग के साथ मिलकर संरक्षित वन भूमि मान लिया।

  इस लाखों हैक्टेयर सामुदायिक जमीन में से वन विभाग ने वन विकास और वानिकी प्रबंधन के लिये उपयुक्त पाया उसे अपने नक्शे पर हरे रंग से रंग दिया।

  और जो जिस जमीन को गांव के निस्तार, गांव के फैलाव जैसी संभावनाओं के लिये जिन जमीनों का उपयोग किया जा रहा था, उसे अनुपयुक्त माना गया। इस जमीन को पटवारी मानचित्र में नारंगी रंग से रंग दिया गया। इसके बारे में तय किया गया कि इन जमीनों पर जो भी व्यावसायिक वन उपज है उसका पूरा दोहन करके ये जमीनें फिर से राजस्व विभाग को दे दी जायेंगी; परन्तु अब तक इसका निराकरण नहीं हुआ है।

  इस जमीन पर बहुत से आदिवासी और गैर–आदिवासी परिवार रहकर
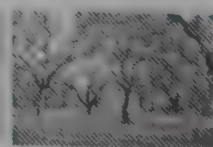
अपना जीवनयापन करते हैं परन्तु 12 दिसम्बर 1996 के बाद वन विभाग ने इस जमीन से खूब बेदखली की। उसका तर्क था कि सर्वोच्च न्यायालय ने आदेश दिया है कि किसी भी वन अभिलेख में दर्ज जमीन वन भूमि मानी जायेगी। परन्तु वन विभाग यह कभी भी स्पष्ट नहीं कर पाया कि किस कानून और न्यायिक आदेश के तहत नारंगी भूमि पर से समुदाय को बेदखल किया गया है। परन्तु अब नारंगी भूमि पर काबिजों को आजीविका, निस्तार, सामुदायिक उपयोग ओर उसके सामुदायिक संरक्षण के वन अधिकारों की मान्यता के कानून में पूरे अधिकार मिलेंगे।
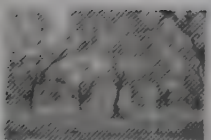
सामान्य सवाल

वन अधिकारों की मान्यता के कानून पर

सवाल - **यह वन अधिकारों की मान्यता के कानून का क्या मामला है ?**

जवाब - भारत की सरकार ने वर्ष 2006 में अनुसूचित जनजाति और अन्य परम्परागत वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, 2006 बनाया है। यह एक कानून है जो कि अब आदिवासियों और अन्य जातियों के निवासियों को जंगल की जमीन एवं वन संसाधनों के उपयोग का कानूनी हक देता है।

सवाल - **यह कानून क्यों बनाना पड़ा?**

जवाब - देखिये, आदिवासी समुदाय हमेशा से जंगल और प्राकृतिक संसाधनों के बीच सह जीवन जीते आये हैं। उनका भोजन, आजीविका का एकमात्र साधन संस्कृति, रहन–सहन, स्वास्थ्य, परम्परायें और विश्वास सब कुछ जल–जंगल–जमीन से जुड़े हुये रहे हैं; परन्तु अंग्रेजों के शासन काल के दौरान सरकार ने जंगलों पर अपना कब्जा जमाने के लिये नीतियाँ और कानून बनाये, जिनका आदिवासियों पर गहरा प्रभाव पड़ा। अंग्रेजी शासन ने जंगलों पर सरकार की सत्ता स्थापित करने के लिये कई कड़े कदम भी उठाये। सरकार ने खुद कानून बनाकर खुद को संसाधनों का मालिक घोषित कर दिया और यहां से उन आदिवासियों और वन निवासियों की बेदख़ली की एक नई परम्परा शुरू हो गई।

सदियों से जंगल में रहने, उसका संरक्षण करने और संयम के साथ संसाधनों का उपयोग करने वाले आदिवासियों के वन अधिकारों और रहने के अधिकार को कभी भी कानूनी मान्यता नहीं दी गई।

यही कारण है कि विकास, वन संरक्षण, जंगली जानवरों की सुरक्षा और पर्यावरण के नाम पर आदिवासियों को अतिक्रमणकारी या कब्जेधारी कहा गया। दूसरे मायनों में देश की एक बड़ी जनसंख्या को यहां रहने का कानूनी हक ही नहीं दिया गया।
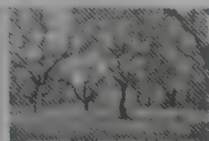
सवाल - वन अधिकार मान्यता कानून (2006) का मकसद या मंशा क्या है?

जवाब - देखिये, इस कानून के साफ तौर पर दो मकसद हैं –

पहला - गुलामी के दौरान जिस तरह अंग्रेजी हुकूमत ने जंगलों पर नियंत्रण करके उसे सरकारी सम्पत्ति बना दिया था, उस व्यवस्था को बदल कर वन संसाधनों के प्रबंधन की प्रजातांत्रिक व्यवस्था स्थापित करना; ताकि प्रबंधन और वन संरक्षण के काम समुदाय के हाथ आयें।

दूसरा - संसाधनों पर समुदाय को कानूनी रूप से अधिकार देना।

सवाल - वन संरक्षण के नजरिये से यह कानून क्यों महत्वपूर्ण है?

जवाब - बेहद महत्वपूर्ण, हमें यह समझना होगा कि वनों पर अधिकार के सही मायने तभी होंगे जब हम वन सम्पदा के संरक्षण की जिम्मेदारी भी लेंगे। हमेशा से आदिवासियों को वनों से बाहर करने के लिये यह तर्क दिया जाता रहा है कि वे जंगल और वन्य प्राणियों को नुकसान पहुंचाते हैं। इस कानून के तहत ग्रामसभायें अब वन्य जीव, वन और जैव विविधता के साथ–साथ पानी के स्रोतों की सुरक्षा करने के लिये सशक्त हैं। अब वे किसी भी ऐसी कोशिश या काम को रोकने के लिये सशक्त है जिनमें वनों, जानवरों या जैव विविधता को नुकसान पहुंचता है।

इस कानून के तहत पहली बार गांव में ग्रामसभा प्राकृतिक संसाधनों – वन, जीव एवं जैव विविधता, के संरक्षण के लिए कानूनन समिति का गठन करेगी। याद रखें कि पहली बार किसी भी कानून में वन संरक्षण के लिए ऐसी कोई ताकतवर सामुदायिक समिति बन रही है।

सवाल - तो ऐसे में यह वन अधिकार कानून क्या कहता है?

जवाब - सबसे अहम् बात तो यह है कि सरकार ने इस कानून के मूल वक्तव्य में स्वयं यह स्वीकार किया है कि अंग्रेजों के शासनकाल और स्वतंत्र भारत में भी जंगलों की व्यवस्थित नीतियाँ बनाते समय आदिवासियों को उनकी पैतृक भूमि पर वन अधिकारों और उनके निवास को पर्याप्त रूप से मान्यता नहीं दी गई थी, जिसके कारण आदिवासियों और अन्य वन निवासियों के प्रति ऐतिहासिक अन्याय हुआ है। ये समुदाय वन पारिस्थितिकी प्रणाली को बचाने और बनाये रखने के लिये बेहद महत्वपूर्ण हैं। मतलब साफ है कि सरकार ने यह कानून बनाकर पहली
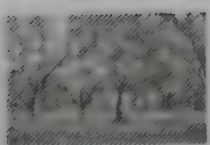
बार यह स्वीकार किया है कि प्राकृतिक संसाधनों और जैव विविधता का आदिवासी जीवन के साथ अटूट सम्बन्ध है, जिसे हम कानूनी मान्यता देते हैं।

सवाल - **इस वन अधिकार कानून (2006) से किसे अधिकार मिलते है?**

जवाब - इस कानून से उन तमाम आदिवासी परिवारों को हक मिलेगा जिन्होंने 13 दिसम्बर 2005 के पहले किसी भी तरह की वन भूमि पर कब्जा किया हुआ है। इसके साथ ही आदिवासियों के साथ ही दूसरे वन निवासियों जैसे– ढीमर, हरिजन, लुहार, कतिया, गोली पारथी आदि समुदायों को भी वन भूमि पर हक मिलेगा। आदिवासियों के अलावा अन्य वनवासियों को यह सबूत देना पड़ेगा कि उनके परिवार 3 पीढ़ी यानि 75 साल से वहां रह रहे हैं।

सवाल - **यह कौन-कौन से वन क्षेत्र में लागू होता है।**

जवाब - यह हर तरह के वन क्षेत्रों में लागू होता हैं यानी आरक्षित वन, संरक्षित वन, गैर–वर्गीकृत वन, संयुक्त वन प्रबंधन, वन ग्राम, राष्ट्रीय उद्यान एवं अभ्यारण्य के साथ–साथ नारंगी भूमि, छोटा झाड़ और बडे झाड के जंगल।

सवाल - **क्या इसमें केवल व्यक्तिगत अधिकार की बात कही गई है, यह तो बहुत थोड़ा है !!**

जवाब - ना, ना...... इसमें तो अधिकारों की खदान है।

1. हर पात्र परिवार को अपने कब्जे की चार हैक्टेयर या 10 एकड़ तक की वनभूमि प्राप्त करने और उसमें रहने का अधिकार है।
2. निस्तार के लिये, उनके जो भी दायरे और अधिकार हैं। इसमें राजाओं, जमींदारों के समय के अधिकार भी शामिल हैं।
3. जो लघु वनोपज (गौण वन उत्पाद) हैं, अब आदिवासी एवं अन्य वनवासी उन्हें इकट्ता कर सकेंगे, उपयोग कर सकेंगे और बेच सकेंगे। जैसे – आंवला, महुआ, अचार, गोंद, गुल्ली, तेंदूपत्ता, जड़ी–बूटी आदि।
4. मछली और पशुपालन करने वालों को अब जंगल के भीतर के
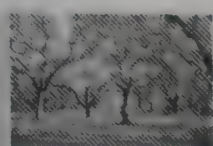
जलाशयों में मछली–केकड़ा पर हक मिलेगा, वे चारागाह का उपयोग कर सकेंगे।

5. आदिम जनजाति समुदायों को समूह में रहने का सामुदायिक हक भी मिलेगा।

6. जहां भी जमीन पर कब्जा या दावे विवादित हैं, वहां भी इन सभी समुदायों को वन भूमि पर हक मिलेगा।

7. जहां भी किसी सरकार या उसके प्राधिकरण ने किसी भी रूप में लोगों को पट्टे दिये हैं, वह भी वन अधिकार के अधिकार पत्र में बदले जा सकेंगे।

8. अब सभी वनग्राम राजस्व ग्राम माने जायेंगे या बदले जा सकेंगे।

9. अब किसी भी जंगल या वन संसाधन का संरक्षण या प्रबन्धन करने का अधिकार आदिवासियों और अन्य वन निवासियों को मिला है। इसमें वह जंगल है जिसका लगातार उपयोग करने के लिये वे संरक्षण कर रहे हैं।

10. अब पारम्परिक और रूढ़िगत अधिकारों को भी मान्यता मिलेगी।

11. इस कानून के मुताबिक जैव–विविधता, सांस्कृतिक विविधता, उससे जुड़े आदिवासियों के ज्ञान और विचारों को सामुदायिक अधिकार की मान्यता दी गई है।

12. परन्तु किसी भी प्रजाति के वन्यजीव का शिकार करना या नुकसान पहुंचाना, इन अधिकारों में शामिल नहीं है। हम इन अधिकारों को व्यक्तिगत और सामुदायिक वन संसाधनों पर समुदाय के अधिकारों के रूप में देख सकते हैं।

सवाल - व्यक्तिगत अधिकार तो समझ आता है कि अब तक कब्जे में रही जमीन में से 10 एकड़ तक जमीन मिलेगी; पर वन संसाधनों पर सामुदायिक अधिकार का क्या मतलब है ?

जवाब - वन संसाधनों पर सामुदायिक अधिकार ही तो आदिवासी अस्मिता के बचे रहने का मूल आधार हैं। इसका मतलब इन अधिकारों में खोजते हैं:–

1. हमें गांव से बाहर निकलने के लिये रास्ता चाहिये।
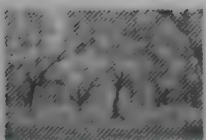
2. बकरियों, गाय या अन्य पालतू पशुओं को चरने के लिए चरनोई की जमीन चाहिये।

3. लोगों और जानवरों को पानी चाहिये।

4. वह स्थान या हमारे पारम्परिक दायरे का जंगल जहां से, हमें लघु वनोपज मिलते हैं।

5. वह जंगल या क्षेत्र जहां हम जंगल या विश्वास के तहत पूजा करने जाते हैं।

6. जहां से हमें जड़ी–बूटी और रोजमर्रा के उपयोग की सामग्री मिलती है।

इस तरह के जरूरी संसाधन, सामुदायिक वन संसाधनों में शामिल हैं। इसलिये हमें यह अच्छे से समझ लेना होगा कि सामुदायिक वन संसाधनों पर दावा करके अधिकार स्थापित नहीं किया गया तो फिर हमें इनके उपयोग और संरक्षण का अधिकार नहीं मिल पायेगा। इसमें सिंचाई और पानी की संरचनायें, श्रद्धा के स्थान, पवित्र वृक्ष, गुफायें, तालाब, नदी, कब्रस्तान / श्मशानगृह भी शामिल हैं।

सोचिये!!! क्या पानी, चारे, लघु–वनोपज, आने–जाने के रास्ते या जड़ी–बूटी के बिना आदिवासी और वन निवासी सांस भी ले पायेंगे ?

सवाल - **क्या इस कानून से वास्तव में समुदाय को वन संसाधनों पर बड़े हक मिलेंगे?**

जवाब - वन अधिकार मान्यता कानून की धारा 3 (झ) इसके मामले में स्पष्ट है। जो कहती है कि अब समुदाय को जंगलों और उससे जुड़े संसाधनों के प्रबन्धन (देख–रेख, उसके शोषण को रोकने, जंगल का संरक्षण करने, जंगल लगाने, उसे नया जीवन देने और उसका बेहतर रख–रखाव करने) और संरक्षण करने का अधिकार भी मिल गया है। अब केवल वे जंगल कटते या जानवरों का शिकार होते देखते नहीं रहेंगे बल्कि उसे रोक भी सकेंगे। यह कानून कहता है कि आदिवासियों को न केवल आजीविका का अधिकार मिल रहा है बल्कि उस पूरे जंगल के प्रबंधन का भी जिम्मेदारीपूर्ण अधिकार दिया गया है जो परम्परागत रूप से
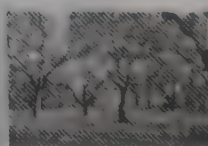
समुदाय का रहा है। इस मायने में देखें तो पता चलता है कि अब लगभग पूरी संपदा तक आदिवासियों और अन्य वन निवासियों की कानूनी पहुँच हो गई है।

सवाल - **वन संरक्षण कानून और वन जीव संरक्षण कानूनों के हिसाब से क्या इस नये कानून में कोई और ठोस अधिकार दिया गया है?**

जवाब - वन अधिकार मान्यता कानून (2006) बुनियादी रूप से मानता है कि आदिवासियों एवं वनों में रहने वाले अन्य निवासियों के जंगल पर अधिकार और जंगल के उनके निवास को मान्यता अब तक नहीं दी गई थी, जबकि वन पारिस्थितिकी प्रणाली (व्यवस्था) को बचाने और बनाये रखने के लिये यह बेहद जरूरी है। इस कानून के मुताबिक संकटग्रस्त जीव आवासों के संदर्भ में लोगों के वन अधिकारों में तब तक कोई भी बदलाव नहीं किया जा सकेगा जब तक कि लोगों के वन अधिकार वन्य जीवों के जीवन और अस्तित्व को प्रभावित न करते हों।

यदि संकट ग्रस्त जीव आवासों के आधार पर वन अधिकार मान्यता कानून के तहत किसी को उसके स्थान से हटाया जाना है तो पहले सरकार को कई शर्ते पूरी करना होंगी, जैसे–

1. पहले लोगों यानी आदिवासी और अन्य वनवासियों को कानून के हिसाब से अधिकार दिये जायें।
2. फिर वन्य जीव संरक्षण अधिनियम 1972 के तहत राज्य सरकार की एजेंसियों को यह साबित करना होगा कि वन अधिकार धारकों (यानी आदिवासियों और अन्य वन निवासियों) वहां (उस वन इलाके में/ राष्ट्रीय उद्यान/ अभ्यारण्य) रहने से वन्य प्रणियों (जंगली जानवरों) के क्रिया–कलापों को अपरिवर्तनीय नुकसान पहुंचता है या उस प्रजाति के जानवर ही वहां खत्म हो सकते हैं।
3. सरकार को यह स्पष्ट करना होगा कि वहां इंसानों और वन्य प्राणियों के सह–अस्तित्व (यानी एक साथ रहना) की कोई संभावना नहीं है।
4. यह सिद्ध हो जाने के बाद सरकार उन आदिवासियों एवं अन्य वन निवासियों के पुनर्वास/ आजीविका को सुरक्षित करने के लिये
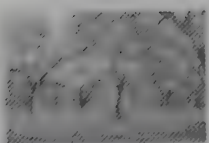
केन्द्र सरकार की नीतियों और कानून के मुताबिक पुर्नवास पैकेज प्रस्ताव तैयार करेगी।

5. इससे लोग सहमत हैं या नहीं, यह जानने के लिये सरकार को ग्राम सभाओं से स्वतंत्र और लिखित में सहमति लेना होगी।

6. किसी भी व्यक्ति को तभी हटाया जायेगा जब पहले उसका पूरी सुविधाओं, भूमि आवंटन और वायदे के हिसाब से पुनर्वास कर लिया जायेगा।

यदि कहीं संकटग्रस्त जीव आवास के नाम पर लोगों को विस्थापित किया गया है, तो कोई भी सरकार उस इलाके/जमीन का किसी दूसरे उपयोग के लिये परिवर्तन नहीं कर सकेगी। वहां फिर न तो उद्योग लगेंगे, न बंगले और न पांच सितारा होटलें ही बनेंगे।

7. इतना ही नहीं यदि किसी व्यक्ति/परिवार या समुदाय को 13 दिसम्बर 2005 के पहले उनके जंगल जमीन से गैर कानूनी ढंग से हटाया गया है या उन्हें सही मुआवजा नहीं दिया गया है तो वे परिवार भी वन अधिकार मान्यता कानून के तहत अपना हक पा सकेंगें। वे आज जहां काबिज हैं, उन्हें वहीं अधिकार मिलेगा।

वन विभाग अब भी बिना कोई प्रक्रिया चलाये या कानून का पालन किये बिना लोगों को वन भूमि से हटा रहा है तो यह गैर-कानूनी काम है। वन अधिकार कानून के तहत हमें राज्य स्तरीय समिति, आदिवासी कल्याण विभाग से इस बारे में बात करना चाहिये। इसके बाद भी यदि शोषण हो तो न्यायालय में जा सकते हैं।

सवाल - **यह बार-बार बात आती रही है कि कानून के अध्याय 6 की धारा 13 के कारण हमारे अधिकार सीमित होते हैं?**

जवाब - नहीं, ऐसा नहीं है। इस धारा में यह लिखा गया है कि अभी तक के जितने भी कानून हैं वे सभी प्रभावी होगे लेकिन अंत में इस वन अधिकार मान्यता कानून के प्रावधानों को ही माना जायेगा। किन्हीं भी परिस्थितियों में इस कानून की बातें ही मान्य होंगी। अतः इस कानून में सभी अधिकार सुरक्षित हैं।
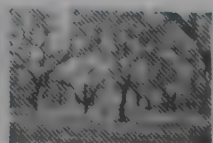
सवाल - **लेकिन ऐसा व्यवहारिकता में नहीं है, अभी भी कई जगह पर जंगल से ना ही लकड़ी उठाने दी जा रही है और न ही वनोपज का संकलन ही करने दिया जा रहा है। ऐसी स्थिति में क्या किया जा सकता है?**

जवाब - इसके लिये अध्याय 3 की धारा 4 को देखना जरूरी है क्योंकि उसमें स्पष्ट रूप से कहा गया है कि वनों में निवास करने वाले समस्त आदिवासियों एवं अन्य परंपरागत वन निवासियों को समस्त अधिकार मिलेंगे ।

सवाल - **यदि कहीं पर वन विभाग के अधिकारी/कर्मचारी ऐसा नहीं करने दे रहे हैं तो क्या किया जा सकता है?**

जवाब - यदि कहीं पर वन अधिकारों को सीमित किया जाता हैं तो इसकी शिकायत की जा सकती है। इस शिकायत को सही पाये जाने पर संबंधित कर्मचारी/अधिकारी पर 1000 रूपये का अर्थदंड लगाया जा सकता है। फिर हम न्यायालय में भी जा सकते हैं।

सवाल - **यह शिकायतें कहां की जा सकती हैं ?**

जवाब –

- यदि कोई शिकायत ग्रामसभा के स्तर पर है तो फिर शिकायत ग्रामसभा (सचिव) को लिखित रूप में देकर पावती लेना तथा उसकी छायाप्रति एस.डी.एम, कलेक्टर व मुख्य सचिव को भेज सकते हैं।
- यदि कोई शिकायत ग्रामसभा से ऊपर की उपखण्ड स्तरीय समिति के खिलाफ है तो फिर ग्रामसभा प्रस्ताव पारित करके राज्य स्तरीय निगरानी समिति को भेज सकती है।
- यदि राज्य स्तरीय समिति आपकी रिपोर्ट पर कार्यवाही नहीं करती है तो फिर ग्रामसभा या व्यक्ति कोर्ट जा सकते हैं। राज्य स्तरीय समिति को शिकायत करे बगैर कोर्ट नहीं जाया जा सकता है।
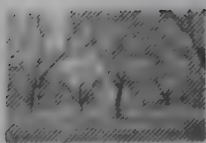
कैसे मिलेंगे हक!!

सवाल - अब यह साफ-साफ बतायें कि इस कानून में कौन से हक मिलेंगे?

जवाब - वन अधिकारों की मान्यता के कानून के मुताबिक उन सभी परिवारों (जिनके बारे में ऊपर बताया है) को जंगल की जमीन (वन भूमि) पर मालिकाना हक मिलेगा यानी इन्हें 4 हैक्टेयर या 10 एकड़ तक की जमीन पर अधिकार पत्र मिलेगा। इसके बाद इन परिवारों को कोई भी बेदखल नहीं कर सकेगा और वे कानूनी हक के साथ जंगल की जमीन पर रह सकेंगे और आजीविका कमा सकेंगे।

सवाल - रह सकेंगे!! क्या वे जंगल में रह भी सकेंगे?

जवाब - हाँ, यह कानून उन्हें अपने हक की जमीन पर निवास करने का भी अधिकार देता है। खेती–किसानी या वन उत्पाद का काम तो वे कर ही सकेंगे।

सवाल - पर ये अधिकार मिलेंगे कैसे?

जवाब - बहुत मतलब की बात है यह!! हमें व्यक्तिगत और सामुदायिक, दोनों ही अधिकार पाने के लिये दावे लगाने पड़ेंगे।

सवाल - ये दावे कहां लगेंगे ?

जवाब - इस कानून के हिसाब से सबसे ताकतवर और निर्णायक संस्था ग्रामसभा है, वहीं ये दावे लगेंगे और आगे प्रक्रिया वन अधिकार समिति चलायेगी। यह समिति गांव के लोगों को मिला कर ही बनेगी।

सवाल - जरा पूरी प्रक्रिया खुल के समझायें ?

जवाब - ठीक है। देखिये सबसे पहले ग्रामसभा की बैठक होगी, जिसमें ग्रामसभा के कम से कम दो तिहाई सदस्य मौजूद होना चाहिये। ग्रामसभा की पहली ही बैठक में दस से पन्द्रह लोगों को मिलाकर वन अधिकार समिति बनायी जायेगी। इस समिति में कम से कम एक तिहाई आदिवासी और एक तिहाई महिलायें होना अनिवार्य है।

- ग्रामसभा, गांव के लोगों से उनके दावे मंगायेगी। दावा करने का
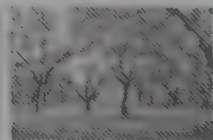
एक फार्म होता है। निजी और समुदाय के अधिकार के दावों के फार्म अलग–अलग होंगे। प्रक्रिया शुरू होने के 3 माह में दावे के फार्म जमा करना होगा।

- वन अधिकार समिति इन तमाम दावों की जांच करेगी और फिर इन दावों को पारित करके उपखण्ड स्तरीय समिति को भेज दिया जायेगा।

सवाल - क्या यह वन समिति, पूर्व में बनी वन समिति से भिन्न है ?

जवाब - हां, यह पूर्व में बनी वन समिति से भिन्न है, यह कानूनी वन अधिकार समिति है। वनों से सम्बधित जितनी भी समितियाँ पहले गांव में बनी हैं वे सरकार या विभाग के आदेशों के तहत बनी हैं उनका कोई कानूनी आधार नहीं है। परन्तु वन अधिकार मान्यता कानून के तहत बनी हुई समितियाँ भारत की संसद द्वारा बनाये गये कानून के अन्तर्गत बनीं हैं, जिन्हें कोई विभाग बदल या खत्म नहीं कर सकता है। इस कानून की समितियों के निर्णय दूसरी हर समिति से ज्यादा महत्वपूर्ण और प्रभावी होंगे।

सवाल - क्या केवल वे ही लोग दावे लगा सकेंगे जिनके नाम वन विभाग के कब्जेधारियों या अतिक्रमणकारियों की सूची में हैं?

जवाब - नहीं, हर वह व्यक्ति वनभूमि पर व्यक्तिगत या सामुदायिक संसाधनों के दावे प्रस्तुत कर सकता है जिसके पास यह प्रमाण हो कि वह कानून में तय की गई अवधि से जमीन पर कब्जा किये हुये है।

सवाल - कानून में तय की गई अवधि क्या है ?

जवाब - कानून में कहा गया है कि 13 दिसंबर 2005 के पूर्व जितने भी आदिवासी व अन्य जातियों के लोग जिस वन भूमि पर काबिज थे, वे सभी उसी जमीन के लिये दावे कर सकते हैं। आदिवासियों के अलावा अन्य जातियों के वन निवासियों का वहां 75 साल या तीन पीढ़ी तक अपना निवास सिद्ध करना होगा।

सवाल - इस कानून में वन भूमि किसे माना गया है?

जवाब - कानून कहता है कि आदिवासियों और अन्य वन निवासियों को हर तरह
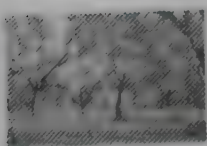
के वनों, जिनमें अवर्गीकृत, असीमांकित वन, संरक्षित वन, आरक्षित वन, अभ्यारण्य और राष्ट्रीय उद्यान भी शामिल है; की भूमि पर हक दिया जायेगा।

सवाल - क्या इस कानून का फायदा केवल जंगल के भीतर रहने वाले आदिवासी और अन्य वन निवासियों को मिलेगा?

जवाब - नहीं, भारत सरकार ने 9 जून 2008 के अपने निर्देशों में स्पष्ट किया है कि ऐसे परिवार जो जंगल के भीतर या जंगल की जमीन से अपनी आजीविका सम्बन्धित जरूरतें पूरी करते हैं, फिर चाहे वे जंगल की सीमा के बाहर ही क्यों न रहते हों, उन्हें इस कानून के तहत हक प्राप्त होंगे।

सवाल - इस कानून में परिवार किसे माना गया है ?

जवाब - इस कानून में तो यह व्याख्या स्पष्ट नहीं है लेकिन सामान्यतः इस कानून के क्रियान्वयन में परिवार उसे माना गया है जिसमें कि पति--पत्नि व उन पर आश्रित संतानें शामिल हों।

सवाल - क्या दावे में कब्जे को सिद्ध करने के लिये सबूत देना होगा?

जवाब - हाँ, यह तो बहुत जरूरी है। इसके लिये सरकार ने सबूतों/साक्ष्यों की एक सूची बनाई है। इस सूची में से कम से कम दो साक्ष्य अपने दावे के साथ हमें लगाने होंगे।

सवाल - उन सबूतों/ साक्ष्यों की सूची में कौन से दस्तावेज हैं?

जवाब - इसके लिये एक लम्बी सूची है जिसमें शामिल हैं –

व्यक्तिगत हक के लिये :

मतदाता पहचान पत्र, मतदाता सूची में नाम, गरीबी की रेखा की सूची में नाम, राशनकार्ड, पासपोर्ट, गृहकर की रसीद, मूल निवास प्रमाण पत्र, पट्टा या लीज, यदि कभी जुर्माना हुआ है तो उसकी रसीदें, गजेटियर, जनगणना रिपोर्ट, मौके पर बनी हुई झोंपड़ी/घर/चेकडेम या मिट्टी, पानी, जमीन का स्थाई काम, कुयें, कब्रस्तान या पवित्र स्थल, कानूनी दस्तावेज, रूढ़ियों–परम्पराओं के अध्ययन की रिपोर्ट, सरकारी आदेश, अधिसूचनायें, किसी आयोग की रिपोर्ट, राजे–रजवाड़े का अभिलेख, पुरखों का पता लगाने वाली वंशावली और गांव के किसी बुजुर्ग व्यक्ति
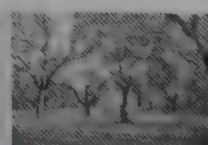
का लिखा हुआ बयान, (लेकिन वह बुजुर्ग व्यक्ति उस जमीन विशेष के लिये दावेदार नहीं होना चाहिए)। **(इनमें से कोई भी दो)**।

अन्य वन निवासी परिवार इनके अलावा सेटलमेंट रिकार्ड जिला भू–अभिलेख कार्यालय (जिला अभिलेखगार) से प्राप्त कर सकते हैं। यह महत्वूपर्ण बात है कि गैर आदिवासी को 75 साल या तीन पीढ़ी से वहां का निवासी होने का सबूत देना होगा।

अन्य वन निवासी परिवार के मामले में ग्रामसभा का प्रस्ताव तथा गांव के बुजुर्ग व्यक्ति का कथन दोनों ही दो सबूतों के रूप में मान्य होंगे।

सामुदायिक वन अधिकारों के लिए :

ऐसे दस्तावेज या भौतिक प्रमाण जो निस्तार वनोपज के अधिकार को स्पष्ट करते हों, जिनमें चारागाह, वनोत्पाद, वनीकरण, जड़ी–बूटी संग्रहण की व्यवस्था या मछली पालन का जिक्र हो। इसके साथ ही स्थानीय समुदायों द्वारा बनाई गई संरचनाओं (मंदिर, मस्जिद, प्रार्थना स्थल, दरगाह भी) के अवशेष, पवित्र वृक्ष, गुफायें, तालाब, नदी क्षेत्र, कब्रस्तान या श्मशान गृह शामिल हैं।

सवाल - **सामुदायिक संसाधनों की दावेदारी कौन करेगा और कौन कर सकता है?**

जवाब - जिसे भी सामुदायिक संसाधन माना गया है उस पर व्यक्ति, व्यक्तियों का समूह, कोई समुदाय या पूरा गांव दावेदारी कर सकता है। इस अधिकार पर दावे करते समय सबको सजग रहना होगा, इसमें हर व्यक्ति और गांव–समाज की जरूरतों का ध्यान रखा जाना चाहिये।

सामुदायिक संसाधनों में छोटे समूह अपने दावे प्रस्तुत कर सकते हैं। आदिम जनजाति समुदाय (प्रिमिटिव ट्राईबल ग्रुप) भी अपने दावे प्रस्तुत कर सकते हैं।

सवाल - **सामुदायिक अधिकारों के दावे क्या सब एक साथ लगा सकते हैं?**

जवाब - नहीं, सामुदायिक अधिकारों के दावे दो तरह से लगाये जा सकेंगे –

1. चारागाही/यायवरी समुदाय, प्राचीन जनजाति समूहों या कृषि
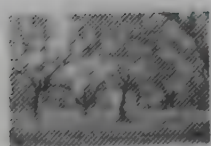
पूर्व समुदायों की ओर से दावे लगाये जायेंगे। इसका एक फार्म है। इस फार्म में ग्राम सभा अपने स्वयं के अधिकारों के दावे नहीं करेगी।

2. ग्राम सभा अपने स्वयं के सामुदायिक अधिकारों के दावे करेगी। अपने दावों पर चर्चा करने और संकल्प पारित करने के लिये ग्राम सभा बैठक करेगी।

सवाल - संसाधनों पर सामुदायिक अधिकार के दावों को सिद्ध करने के लिये सबूत कहां से इकट्ठा करेंगे?

जवाब - सभी सम्बंधित सरकारी विभागों (जैसे–वन विभाग और राजस्व विभाग) को यह निर्देश दिये गये हैं कि वे वन अधिकारों के संबंध में सभी पुराने रिकार्ड ढूंढ कर आसानी से उपलब्ध होने की स्थिति में रखे और दावेदारों द्वारा मांगे जाने की स्थिति में तुरन्त निःशुल्क प्रतिलिपि (फोटोकापी) दी जाये।

इसका मतलब है कि हम सरकारी विभागों से रिकार्ड मांग सकते हैं। इसके साथ ही बाजिबुल अर्ज दस्तावेज की प्रति भी जिला राजस्व रिकार्ड कक्ष (जिला अभिलेखगार) से ली जा सकती है।

इसके साथ ही निस्तार पत्रिका, राजस्व के दस्तावेज, वन विभाग के भू–अभिलेख की प्रतियां भी हम मांग सकते है।

इसके अलावा राजे–रजवाड़ों को उस समय के मौका स्थल पर मौजूद साक्ष्य– जैसे रास्ता, कुआं, पारम्परिक संरचना, आदि को भी दावों के साथ लगाया जा सकता है। महत्वपूर्ण है कि गांव के बुजुर्गों के कथन को लिखकर ग्रामसभा अनुमोदित कर सकती है।

सवाल - इस कानून में दावे लगाने की समय सीमा है, यदि वह खत्म हो गई तो फिर दावे लगाये जायेंगे या नहीं ?

जवाब - देखिये, समय सीमा जो रखी गई है वह तात्कालिक रूप से रखी गई है लेकिन इस समय सीमा में यदि दावा नहीं होता है तो फिर ग्रामसभा अपने अनुसार समयसीमा तय कर सकती है, जब तक कि अंतिम व्यक्ति का दावा न लग जाये।

सवाल - **दावे फार्म या साक्ष्य के दस्तावेजों के लिये शुल्क या कोई राशि देना पड़ेगी?**

जवाब - नहीं, दावा फार्म और दावे के समर्थन के लिये सरकार से मिलने वाले साक्ष्यों की छायाप्रति निःशुल्क उपलब्ध कराई जायेगी। (पत्र क्रमांक–एफ–9–9/2008/5/ पच्चीस, दिनांक 06 जून 2008)।

सवाल - **वन अधिकार के दावों के लिये जाति प्रमाण पत्र जरूरी है, पर कई दावेदारों को ये प्रमाण पत्र मिल ही नहीं पा रहे हैं; तो क्या ऐसे में उनके दावे निरस्त कर दिये जायेंगे?**

जवाब - नहीं, सबसे पहले तो सरकार को अभियान चलाकर सबको जाति प्रमाण–पत्र देना चाहिये। फिर भी यदि उन्हें प्रमाण पत्र नहीं मिलते हैं तो ग्रामसभा अपनी जानकारी के आधार पर दावे पर निर्णय ले सकती है और दावा स्वीकार कर सकती है। इसके बाद उस दावे के साथ स्थायी प्रमाण पत्र, जाति प्रमाण पत्र लगाने की जिम्मेदारी उपखण्ड अधिकारी की होगी; पर दावा निरस्त नहीं होगा।

सवाल - **यदि किसी व्यक्ति के पास 18 एकड़ की भूमि पर काबिजी है और उसने पूरी जमीन का ही दावा किया है तो फिर उसे अधिकार पत्र कितनी जमीन का मिलेगा।**

जवाब - देखो भाई, कानून में 4 हेक्टेयर या 10 एकड़ तक की काबिजी के लिये ही प्रावधान है, अतएव इतनी ही जमीन का अधिकार पत्र उसे मिलेगा। शेष भूमि के विषय में कानून में कहीं भी कोई भी प्रावधान नहीं है। लेकिन यदि वह संयुक्त परिवार के रूप में रह रहे हैं (मां–बाप व अन्य विवाहित बच्चे) तो फिर परिवार के अन्य सदस्य बाकी की जमीन पर अपना दावा प्रस्तुत कर सकते हैं। ऐसे में पूरी काबिज जमीन का हक प्रमाण पत्र मिल सकता है।

सवाल - **क्या वन अधिकार कानून में केवल गांव की ही ग्रामसभा हो सकती है?**

जवाब - नहीं!! मजरा, टोला, फलिया भी अपनी पृथक ग्रामसभा की मांग कर सकते हैं परन्तु यह देखना होगा कि बाहर से आये झुंड या समूह नये कब्जे करके टोले के रूप में ग्रामसभा स्थापित करने की प्रक्रिया न चलायें।
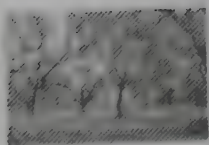
सवाल - **ग्रामसभा की बैठकें तो होती ही नहीं हैं और यदि होती भी हैं तो उनमें कुछ गिने-चुने लोग ही बैठकर निर्णय ले लेते हैं तब क्या?**

जवाब - वन अधिकार कानून में ऐसी ग्रामसभा मान्य नहीं की जायेगी। इसके तहत दो–तिहाई सदस्यों (यानी 100 में से 67) का बैठक में मौजूद रहना जरूरी है।

सवाल - **क्या दावों की पड़ताल केवल दस्तावेजों/कागजों के आधार पर ही होगी?**

जवाब - नहीं, वन अधिकार समिति स्थल निरीक्षण कर के भी करेगी। जब कोई व्यक्ति या समुदाय अपनी दावेदारी का आवेदन प्रस्तुत करेगा, तो यह जरूरी है कि वह अपने दावा आवेदन की पावती या रसीद जरूर ले ताकि भविष्य में उसकी दावेदारी का प्रमाण रहे।

सवाल - **दावों का रिकार्ड कैसे रखा जायेगा?**

जवाब - हर दावे का अलग रिकार्ड रखा जायेगा। उसके केस में दावा फार्म, जारी नोटिस, पेश किये गये सबूत/साक्ष्य और मौकों पर किये गये मुआयने की रिपोर्ट रखी जायेगी। मौके/स्थल के मुआयने की रिपोर्ट पर ग्राम पटेल, कोटवार, सरपंच या पंच, राजस्व अथवा वन विभाग के स्थानीय कर्मचारी या अन्य वहां मौजूद किसी भी गवाहों के हस्ताक्षर कराना होंगे। इसके साथ ही वन अधिकार समिति एक दावा रजिस्टर भी रखेगी; जिसमें दावा फार्म, स्थल परीक्षण, ग्रामसभा संकल्प से सम्बन्धित जानकारी लिखी होगी।

जब सारे दावे उपखण्ड समिति को चले जायेंगे तब यही रजिस्टर ग्रामसभा का सबसे अहम् अभिलेख होगा।

सवाल - **आदिवासियों के जीवन पर जबरिया बेदखली की काली छाया लगातार पड़ती रही है, ऐसे में वन अधिकार मान्यता कानून का क्या मतलब है?**

जवाब - हमें इस शोषण के खिलाफ वन अधिकार मान्यता कानून में संघर्ष के कई हथियार मिले हैं।

यह कानून कहता है कि जहां भी आदिवासियों या अन्य वन निवासियों
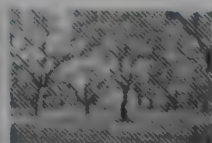
को 13 दिसम्बर 2005 के पहले उनका सही और कानूनी पुनर्वास किये बिना अवैध रूप से बेदखल या विस्थापित किया गया है, उन्हें पुनर्वास और वैकल्पिक भूमि पर कानूनी हक मिलेगा। **धारा- 3 (5)**

सवाल - पर राष्ट्रीय उद्यान और अभ्यारण्यों में रहने वाले आदिवासी एवं अन्य वन निवासी परिवारों का क्या होगा? क्या उन्हें कोई हक मिलेगा ?

जवाब - बिल्कुल! यह कानून स्पष्ट रूप से कहता है कि परम्परागत रूप से ऐसे क्षेत्रों की भूमि, जिनमें अभ्यारण्य और राष्ट्रीय उद्यान भी शामिल हैं, जिन तक समुदाय की पहुंच थी, पर वन अधिकार दिये जायेंगे। **धारा 2-(क)**

सवाल - क्या अब वन भूमि से बिल्कुल विस्थापन नहीं होगा?

जवाब - इस कानून के बन जाने के बाद अब विस्थापन तभी हो सकता है जब सरकार (वन विभाग) यह सिद्ध कर देगी कि लोगों के वहां (जंगल में) रहने से वन, जैव विविधता या वन्य जीवों के अस्तित्व पर खतरा स्थापित हो रहा है। सरकार को यह सुनिश्चित करना होगा कि जिन परिवारों को हटाया जा रहा है उन्हें जीवनयापन, निवास और सुरक्षा के पूरे विकल्प दिये दिये गये हैं। इसके बिना विस्थापन नहीं होगा।

सवाल - क्या सरकार ने भी निस्तार के अधिकारों को किन्हीं दस्तावेजों में दर्ज किया है?

जवाब - हाँ, वन अधिकार मान्यता कानून 2006 के सम्बन्ध में यह आदेश दिये गये है कि जिला प्रशासन हर गांव के निस्तार के क्षेत्र की जानकारी बाजिबुल–अर्ज और निस्तार पत्रक से छांटकर संकलित कर ले। इसमें परम्परा से चले आ रहे अधिकार भी शामिल होंगे। यह जानकारी एक प्रति में ग्राम पंचायत और ग्रामसभा को मिलना ही चाहिये।

सवाल - सरकारी रिकार्ड में निस्तार का हर अधिकार तो दर्ज नहीं है तब?

जवाब - इतना ही नहीं, कई ऐसे अधिकार होंगे जो सरकार, खासतौर पर वन विभाग रिकार्ड में रखता ही नहीं है। उन्हें भी अब जिला प्रशासन को दर्ज करना है। इसमें किसी भी वन भूमि में किसी भी प्रकार की पूजा/प्रार्थना से सम्बन्धित स्थान तक आने–जाने का अधिकार, शवदाह स्थल या कब्रस्तान, बैठक/चौपाल करने का अधिकार, जड़ी बूटियों/
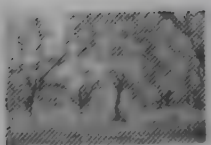
महुआ, फूल आदि के प्रसंस्करण करने वाली जगह पर गांव वालों का अधिकारों पर दावा करना शामिल है। इससे भविष्य में किसी प्रकार के विवाद की स्थिति से बचा जा सकेगा।

इसमें किसी जंगली नदी/नाले के किनारे नहाने कपड़े धोने, मवेशियों को पानी पिलाने जैसे अधिकार शामिल समझे जाने चाहिये।

सवाल - **क्या इस कानून के तहत अधिकार केवल उन्हें मिलेंगें जो जंगल की सीमा के भीतर निवास करते हैं या जिनके घर वन भूमि पर हैं?**

जवाब - नहीं, 9 जून 2008 के अपने एक आदेश में भारत सरकार के आदिवासी विकास मंत्रालय ने यह स्पष्ट किया है कि इस कानून के तहत उन सभी कब्जेधारियों को अधिकार मिलेंगें जिनका जंगल की भूमि पर कब्जा है या जो वन भूमि का उपयोग आजीविका के लिये करते हैं। फिर भले ही वे वनों के बाहर किसी राजस्व गांव में क्यों न निवास करते हों। हक पाने के लिये वनभूमि का या वन भूमि पर निवासी होना जरूरी नहीं है।

सवाल - **क्या केवल भूमिहीन परिवारों को ही वन भूमि पर अधिकार मिलेगें?**

जवाब - ऐसे परिवार, जिन्होंने वनों की भूमि पर कब्जा किया है पर उन्हें उस भूमि का मालिकाना हक नहीं दिया गया है, ऐसे परिवारों को कानून का लाभ मिलेगा। यदि उनके पास कोई राजस्व भूमि है या राजस्व भूमि पर कब्जा है, तो उस राजस्व भूमि पर अधिकार या मालिकाना हक नहीं मिलेगा, पर वन भूमि पर हक मिलेगा।

सवाल - **वन अधिकार मान्यता कानून के तहत हमें कौन सा कागज मिलेगा?**

जवाब - इस कानून के तहत दावे सिद्ध होने पर दावेदार को एक हक अभिलेख मिलेगा, जिसे तीन सरकारी अफसरों – मंडलीय वन संरक्षक, जिला कलेक्टर और जिला जनजातीय कल्याण अधिकारी, द्वारा दस्तखत कर प्रमाणित किया जायेगा।

सवाल - **क्या कोई व्यक्ति अपने हक की जमीन किसी अन्य व्यक्ति को दे सकता है या जमीन बेच सकता है?**

जवाब - नहीं, वन अधिकार मान्यता कानून के तहत मिली भूमि न तो बेची जा सकती है न ही किसी अन्य को दी जा सकती है। यह अधिकार परिवार
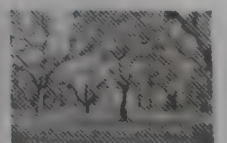
में ही अगली पीढ़ी को मिलेगा और कोई वारिस न होने पर निकट सम्बंधी को मिल सकती है।

सवाल - **वन अधिकार कानून के अंतर्गत अधिकार पत्र किसके नाम से बनेंगे?**

जवाब - वन अधिकार का अधिकार पत्र विवाहित व्यक्तियों की दशा में पति–पत्नि के नाम में संयुक्त रूप से और यदि किसी घर का मुखिया एकल व्यक्ति है तो वह उसके अकेले के नाम से रजिस्टर्ड होगा। भविष्य में वह परिवार के सीधे वारिस के नाम पर हो सकेगा और यदि कोई सीधा वारिस नहीं है तो निकटतम संबंधी को चला जायेगा। यह अधिकार वंश के हिसाब से आगे चलता रहेगा।

सवाल - **सरकार का कौन सा विभाग इस कानून को लागू और क्रियान्वयन करने के लिये जिम्मेदार है?**

जवाब - आदिम जाति कल्याण या आदिवासी विकास विभाग वन अधिकार मान्यता कानून को लागू और क्रियान्वयन करने के लिये जिम्मेदार है।
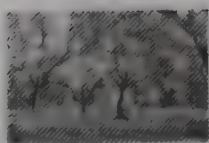
वनोपज और विकास के अधिकार

सवाल - वन क्षेत्र से आदिवासी वन उपज कैसे लेकर आ सकते हैं?

जवाब - जंगल से लघु वनोपज या गौण वन उपज से आजीविका चलाने वाले व्यक्ति और समुदाय सिर पर रखकर, साईकिल द्वारा या ठेलों से लाकर उस उपज को बेच सकते हैं। **नियम 2 (घ)**

सवाल - लघु वनोपज या गौण वनोपज का क्या मतलब है?

जवाब - इसमें शहद, बेंत, बांस, ककून, लाख, आंवला, जड़ी–बूटियाँ, जलाने के लिये लकड़ी, औषधीय पौधे, पेड़ के ठूंठ, टसर, कंदमूल, फल, जलाशयों की मछली, केकड़े, जलीय पौधे, पत्थर, स्लेट, गिट्टी, मुरूम सब शामिल हैं।

सवाल - जिन ग्रामों में गैर-वन भूमि नहीं है, क्या वहां पर विकास के काम नहीं होंगे?

जवाब - होंगे, अवश्य होंगे। ग्रामसभा की सिफारिश पर जहां पर गैर–वन भूमि नहीं है और वनग्राम हैं वहां पर सरकार निम्नलिखित की अनिवार्य रूप से व्यवस्था करेगी। चाहे एक हेक्टेयर में 75 पेडों को गिराया जाना भी होगा, तब भी सरकार को ये व्यवस्थायें तो करनी ही पड़ेंगी–

1. विद्यालय
2. औषधालय
3. आंगनवाड़ी
4. राशन दुकान
5. विद्युत लाईन
6. टंकियां और अन्य जलाशय
7. पेयजल आपूर्ति और अन्य पाईप लाईनें
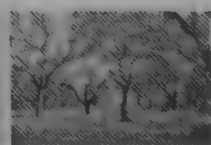
8. लघु सिंचाई नहरें
9. अपारंपरिक ऊर्जा स्त्रोत
10. कौशल विकास कार्यक्रम
11. सड़कें
12. सामुदायिक केन्द्र

सवाल - कई बार यह देखा जाता है कि जिस जमीन पर कब्जा किया गया है उस जमीन पर राजस्व एवं वन विभाग के बीच विवाद होता है, तो क्या ऐसी स्थिति में दावे निरस्त कर दिये जायेंगे?

जवाब - नहीं, राजस्व विभाग और वन विभाग के बीच किसी जमीन पर नियंत्रण को लेकर विवाद होता है और उस पर अधिकार के लिये वन अधिकार मान्यता कानून के तहत व्यक्तिगत या सामुदायिक संसाधनों पर अधिकार के लिये दावा लगाया जाता है तो दावे का सत्यापन करके उपखण्ड या जिला स्तर की समिति को भेज दिया जायेगा।

जिला कलेक्टर उस विवाद का निराकरण करके जिला स्तरीय समिति से संकल्प पारित करा सकेगें। यदि यह सिद्ध होता है कि दावा की गई जमीन राजस्व भूमि है, तो राजस्व विभाग के निर्देशों के अनुसार दावेदार को पट्टा देने की कार्यवाई की जा सकती है।

सवाल - यदि किसी व्यक्ति के पास पहले से राजस्व भूमि है और उसने वन की जमीन पर काबिजी भी की है तो फिर क्या वह दावा कर सकता है या नहीं ?

जवाब - यदि किसी व्यक्ति/परिवार के पास पहले से राजस्व भूमि है तो भी वह दावा तो कर सकता है।
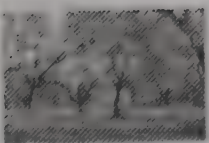
समितियों की भूमिका

सवाल - **ग्रामसभा के मुख्य काम कौन से हैं ?**

जवाब - ग्रामसभा गांव के लोगों से दावे मंगवायेगी और इन दावों के परीक्षण का काम दावों की तारीख से तीन माह की अवधि में वन अधिकार समिति से करवायेगी। इस तीन माह की अवधि को कारण बताते हुये बढ़ाया जा सकता है।

सवाल - **वन अधिकार समिति के मुख्य काम कौन से हैं ?**

जवाब - वन अधिकार समिति के मुख्य काम निम्नानुसार हैं –

- सबसे पहले तो वन अधिकार समिति तमाम दावों को जांच करके उनके साथ के सबूतों को प्राप्त करेगी।
- फिर दस्तावेजों के आधार पर नक्शा बनायेगी।
- इसके बाद वन अधिकार के दावेदारों की सूची तैयार करके उनका व्यक्तिगत सत्यापन करना।
- व्यक्तिगत या सामुदायिक दावों का सत्यापन करते समय दावेदार या उनके प्रतिनिधि की उपस्थिति जरूरी है।
- दावा फार्म मिलने के बाद समिति हर दावेदार को उसके दावे के भौतिक सत्यापन की तारीख और समय की लिखित में सूचना देगी।
- जिस जगह का हक दिया जा रहा है उसकी सीमा को दर्शाने वाले चिन्ह मानचित्र पर दर्शाना।
- इतना काम करने के बाद वन अधिकार समिति अपनी राय और निष्कर्ष ग्रामसभा के सामने रखेगी।

सवाल - **यदि किसी दावे के सम्बन्ध में विवाद हो तब क्या होगा ?**

जवाब - यदि किसी दावे के मामले में परम्परागत या रूढ़िगत सीमाओं के बारे में कोई बहस है या किसी वन क्षेत्र का एक से अधिक ग्रामसभाओं द्वारा उपयोग किया जाता है तो दोनों ग्रामसभाओं की वन अधिकार समितियाँ संयुक्त बैठक करके निर्णय लेंगी। इसके बावजूद यदि निर्णय नहीं हो पाता है तो ग्राम सभा उस मामले को समाधान के लिये उपखण्ड स्तरीय
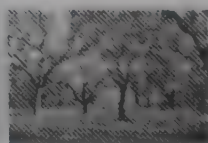
समिति को दे देगी। बेहतर है कि हर विवाद ग्रामसभा के स्तर पर निपटा लिया जाये।

सवाल - ग्रामसभा और वन अधिकार समिति को व्यक्तिगत कब्जों और सामुदायिक संसाधनों के बारे में जानकारी कैसे मिलेगी?

जवाब - सम्बन्धित विभाग (वन विभाग, राजस्व एवं अन्य) ग्रामसभा या वन अधिकार समिति की मांग पर तमाम प्रमाणित जानकारियाँ और दस्तावेज उन्हें देंगे और जरूरत पड़ने पर स्पष्टीकरण भी देंगे।

सवाल - यह कानून अलग-अलग स्तरों पर किसके माध्यम से लागू होगा?

जवाब -

1. ग्रामसभा सबसे बड़ी अधिकारी है इसके बाद वन अधिकार समिति दावों को जांचकर आगे बढ़ायेगी।
2. इसके बाद उपखण्ड स्तरीय समिति होगी। इस समिति का अध्यक्ष अनुविभागीय दण्डाधिकारी (एस.डी.एम.) होगा। इसके अलावा समिति में वन विभाग और आदिम जाति कल्याण विभाग के अधिकारी (एसडीओ) सदस्य होंगे। साथ ही उस जनपद पंचयत के तीन सदस्य भी उपखण्ड स्तरीय समिति में होंगे, जिनके नाम जिला पंचायत तय करेगी। इन तीन जनपद सदस्यों में से दो सदस्य आदिवासी समुदाय और एक महिला सदस्य होना चाहिये।
3. जिला स्तरीय समिति के अध्यक्ष कलेक्टर होंगे। साथ ही इसमें वन विभाग के जिला अधिकारी (डीएफओ) आदिमजाति कल्याण विभाग के सहायक आयुक्त और जिला पंचायत के तीन सदस्य भी शामिल होंगे। इनमें से दो आदिवासी होंगे जो जंगल क्षेत्र में रहते हों और एक महिला सदस्य होगी।

सवाल - उपखण्ड स्तरीय समिति के क्या काम हैं?

जवाब - सभी दावे मिलने, जांच और पुष्टि होने के बाद वन अधिकार समिति की अनुशंसा के बाद ग्रामसभा निर्णय का संकल्प पारित करेगी और इसकी एक प्रति उपखण्ड स्तर की समिति को भेजेगी।

- यह समिति सभी ग्रामसभाओं को नाजुक पेड़ पौधों, जीव जन्तुओं और जैव विविधता से सम्बन्धित जानकारी उपलब्ध करवायेगी; ताकि उनका संरक्षण किया जा सके।
- यह समिति ग्रामसभा और वन अधिकार समिति को वन और राजस्व मानचित्र, मतदाता सूची और अन्य दस्तावेज उपलब्ध
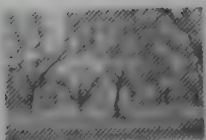
करवायेगी ताकि वे दावों पर सही निर्णय ले सके।

- सभी ग्रामसभाओं के संकल्पों / निर्णयों का संकलन एवं संयोजन करेगी।
- जो दावे ग्रामसभा से आये हैं उनका परीक्षण करेगी।
- किन्हीं दावों में विवाद होने पर उनकी सुनवाई कर निर्णय करेगी?
- सभी दावे मिलने के बाद प्रस्तावित वन अधिकारों के ब्लॉक एवं तहसीलवार प्रारूप तैयार करेगी।
- फिर दावों और ब्लॉक के प्रारूप को अंतिम विनिश्चय के लिये जिला समिति को भेजेगी।

सवाल - यदि किसी व्यक्ति या समुदाय को ग्रामसभा के निर्णय से आपत्ति हो या सहमति न हो तब क्या करना होगा?

जवाब - यदि कोई व्यक्ति या समुदाय अपने दावों के सम्बन्ध में ग्रामसभा के संकल्प से सहमत न हो तो वह ग्रामसभा के संकल्प पारित होने के साठ दिन के भीतर उपखण्ड स्तरीय समिति में अपनी याचिका दर्ज कर सकता है।

सवाल - और यदि कोई उपखण्ड स्तरीय समिति के निर्णय से असहमत हो, तब उसे क्या करना होगा?

जवाब - ऐसी स्थिति में उपखण्ड समिति के निर्णय की तारीख से 60 दिन के भीतर वह जिला समिति में अपनी याचिका दर्ज करा सकता है।

सवाल - क्या केवल वनाधिकार समिति और उपखंड स्तरीय समिति ही हैं या इनके अलावा और कोई भी समिति है?

जवाब - हां, इनके अलावा जिला स्तर वन समिति और राज्य स्तरीय निगरानी समिति भी होगी। जिला स्तर की समिति में जिला कलेक्टर उसका अध्यक्ष होता है, साथ ही पांच अन्य सदस्य होते हैं।

सवाल - जिला स्तरीय समिति में कौन लोग होंगे?

जवाब - इस समिति में जिलाधीश (कलेक्टर) अध्यक्ष होंगे। डी.एफ.ओ. और आदिवासी कल्याण विभाग के सहायक आयुक्त सदस्य होंगे। जिला पंचायत द्वारा तीन सदस्य होंगे। यहां पर पंचायत सदस्यों की सदस्यता के लिये सब–डिवीजनल स्तर की समिति के चयन में अपनाया गया तरीका लागू होगा।
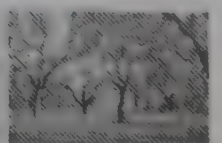
सवाल - जिला स्तरीय समिति के क्या काम हैं?

जवाब - जिला स्तरीय समिति के कामों में प्रमुख रूप से निम्न है–

- यह जांचना कि सभी दावे अधिनियम के अनुसार निपटाये गये हैं कि नहीं।
- उपखंडस्तरीय समिति के निर्णय से असंतुष्ट व्यक्तियों के आवेदन की सुनवाई करना।
- अंर्त–जिला दावों के संबंध में अन्य जिलों से समन्वय करना।
- अंतिम रूप से दिये गये वनअधिकारों के रिकार्ड का प्रकाशन सुनिश्चित करना।
- यह सुनिश्चित करना कि अधिनियम के तहत वन अधिकारों और टाईटिल के रिकार्ड की प्रमाणित प्रति संबंधित दावेदार और ग्रामसभा को मिले।

सवाल - राज्य स्तरीय निगरानी समिति में कौन लोग होंगे।

जवाब - राज्य स्तरीय समिति 10 सदस्यों की होगी। राज्य के मुख्य सचिव इसके अध्यक्ष होंगे एवं राज्य के आदिवासी कल्याण विभाग के आयुक्त इसके सचिव होंगे। राजस्व विभाग के सचिव, आदिवासी या समाज कल्याण विभाग के सचिव, वन सचिव, पंचायत विभाग के सचिव, वन विभाग के पी.सी.सी.एफ एवं आदिवासी मंत्रणा परिषद के 3 सदस्य, इस समिति के सदस्य होंगे। जिस राज्य में आदिवासी मंत्रणा परिषद नहीं होगी, वहां राज्य सरकार 3 आदिवासियों को मनोनीत करेगी। इन सदस्यों में कम से कम एक महिला सदस्य का होना अनिवार्य है।

सवाल - राज्य स्तरीय निगरानी समिति का कार्य क्या है?

जवाब -

- यह समिति वन अधिकार मान्यता की प्रक्रिया पर निगरानी रखेगी।
- कोई शिकायत होने पर तुरंत कार्यवाही करेगी।
- अभ्यारण्य एवं राष्ट्रीय पार्क में रहने वाले लोगों के वन अधिकार प्राप्त करने के बाद विस्थापन की स्थिति में पुर्नवास प्रक्रिया पर निगरानी रखेगी।

हमारी भूमिका

सवाल - वन अधिकार कानून तो बन गया, पर इसके क्रियान्वयन में स्वैच्छिक संस्थायें और संगठन क्या भूमिका निभा सकते हैं?

जवाब - स्वैच्छिक संस्थाओं और जन संगठनों की इसमें बेहद अहम भूमिका हो सकती है।

1. सबसे जरूरी है कि हम सब इस कानून की आत्मा यानी संसाधनों पर समुदाय के अधिकार और समुदायिक संसाधनों के अधिकार को समझें और महसूस करें।

2. कार्यकर्ताओं की समझ विकसित करें और उन्हें समुदाय के बीच भेज कर जानकारी का ज्यादा से ज्यादा प्रचार करें।

3. प्रक्रिया के अनुसार दावे करवायें और ध्यान दें कि सामुदायिक संसाधनों पर अधिकार की प्रक्रिया ठोस ढंग से चले।

4. ग्रामसभा को प्रेरित कर सही और लोकोन्मुखी वन अधिकार समिति बनवाने में मदद करें।

5. बेदखली और गैर कानूनी विस्थापन को रूकवायें।

6. लोगों को बतायें कि यह कानून हमें पुनः प्राकृतिक–सामुदायिक संसाधनों पर पूरे अधिकार स्थापित करने का अवसर देता है।

7. हम खुद समझें और सबको समझायें कि जंगल, जंगल के जानवर और जंगल की संपदा के संरक्षण का काम पूरी जिम्मेदारी से अपने हाथ में लें। जो कोई भी संसाधनों को नुकसान पहुंचाता है उसे रोकें वह न रूके तो सबक सिखायें और कानून के हवाले करें।

हमारे प्रकाशन

हमारे बारे में

विकास संवाद मुद्दे आधारित जनपैरवी समूह है। यह समूह लोकतांत्रिक मूल्यों में विश्वास रखते हुये मुद्दों की अधिकार आधारित वकालत की प्रक्रिया को चलाने और आगे बढ़ाने के मकसद से अस्तित्व में आया। विकास संवाद मुख्यतः मुख्यधारा की मीडिया के साथ मुद्दों को चर्चा में लाने और नीतिगत बदलावों की पहल करता है।

एक समूह के रूप में विकास संवाद जनसंगठनों, अलग-अलग संस्थाओं के साथ प्रशिक्षण, पैरवी, दृष्टि निर्माण, शोध व लेखन, विश्लेषण आधारित क्षमता वृद्धि करते हुये संदर्भ समूह की भूमिका का निर्वाह कर रहा है।

विकास संवाद

ई–7/226, प्रथम तल, धनवंतरी कॉम्पलेक्स के सामने,
अरेरा कॉलोनी, शाहपुरा, भोपाल (मध्यप्रदेश)
फोन : +91 755 4252789, ई–मेल : vikassamvad@gmail.com
www.mediaforrights.org